1

संवादों के सारांश में नवगीत

— डॉ. वीरेन्द्र निर्झर

'नवगीत : संवादों के सारांश' पुस्तक डॉ अवनीश सिंह चौहान द्वारा नवगीत पर अपनी जिज्ञासाओं को शांत करने तथा नवगीत को लेकर काव्य जगत के धुंधलके को साफ करने के उद्देश्य से प्रमुख रचनाकारों से साक्षात्कार के मधुकणों का संचयन है, जिसे वे अपनी समझ को विकसित करना कहते हैं। वास्तव में इसमें नवगीत की समझ को विकसित करने का प्रयोजन ही सर्वोपरि है। इस संकलन में देश के प्रतिष्ठित चौदह नवगीतकारों से संवाद स्थापित हुआ है। यह अवनीश जी के 2009 से 2022 अर्थात 12-13 वर्षों के अथक परिश्रम का प्रदेय है। संवादों पर केंद्रित इस पुस्तक में प्रश्नकर्ता के प्रश्न जहाँ सधे हुए, मौलिक वैविध्यपूर्ण, समसामयिक और विधा से संबंधित हैं, वहीं उनके उत्तर भी सटीक, उपयोगी, बिंदुवार और कवि की अपनी सोच तथा रचनाधर्मिता से जुड़े हैं।

संवाद की यह परंपरा हमारे प्राचीन ग्रंथो में पहले से विद्यमान है, जहाँ जिज्ञासु मुनि भारद्वाज प्रश्न करते हैं और 'याग्यवल्क्य मुनि परम विवेकी' उसे समझाते हैं। अन्यान्य ग्रंथ भी सूत जी और व्यास जी द्वारा प्रश्नोत्तर रूप में परिवृद्ध हुए हैं— "व्यास कहयो करि ग्रंथ।" अवनीश सिंह द्वारा संकलित 'नवगीत संवाद' किसी कथावस्तु को बढ़ाने या उद्घाटित करने से संबंधित नहीं है, बल्कि नवगीत की वस्तुस्थिति तथा उससे जुड़ी गुत्थियों को रेशा-रेशा खोलना और स्पष्ट करने का प्रयास है। यह मात्र सूचनाओं का आदान-प्रदान नहीं है, अपितु नवगीत के संबंध में सम्यक जानकारी, सटीक विश्लेषण और नवगीतकार की विधा के प्रति संपृक्ति का विवेचन है। प्रत्येक साक्षात्कार के पूर्व रचनाकार का परिचय और उसकी उपलब्धियों से भी अवगत कराया गया है। ये साक्षात्कार अवनीश जी ने वय के आधार पर संकलित किए हैं। नवगीत के वरिष्ठ कवि सत्यनारायण (1935) से लेकर 1950 में जन्मे डॉ ओम प्रकाश सिंह तक 14 प्रमुख कवियों को इसमें सम्मिलित किया गया है। डॉ अवनीश सिंह ने इन साक्षात्कारों में साक्षात्कार-दाता के नवगीत से जोड़ने की समसामयिक परिस्थितियों तथा नवगीत के प्रति उनके विचारों को एक-एक कर कुरेदने का प्रयास किया है, जिसमें नवगीत की परंपरा उसके स्वरूप उद्भव और समस्या तथा स्पर्धा और सिद्ध करने की जिगीषा दिखाई पड़ती है।

इस पुस्तक में पहला साक्षात्कार फणीश्वरनाथ रेणु की अगुवाई में जेपी आंदोलन में सक्रिय रहे कवि-संपादक सत्यनारायण जी से है। साठोत्तरी के दौर में आपकी रचनाओं को नोटिस किया जाने लगा था। निरंतर क्रूर होते समय में आपने जहाँ लोकमंगल और अनुभवयुक्त, बोधपूर्ण रचनाएँ लिखीं, वहीं तत्कालीन विद्रूपताओं, अंतर्विरोधों और कुंठाओं को भी स्वर दिया। जनता की बोली-वाणी में जनता से सीधा संवाद करते सत्यनारायण जी की गीत पंक्तियाँ नुक्कड़, चौराहों, सभा, जुलूसों आदि में सुनी जाने लगीं। वे मानते हैं कि कवितावादियों ने जब गीत की अस्मिता पर सवाल खड़े किए तो कविता वाले कवि और गीत वाले गीतकार हो गए। वैसे भी वे गीत, नवगीत और कविता के कंटेंट में कोई बुनियादी अंतर नहीं मानते। बिंब, प्रतीक सब एक हैं, केवल फॉर्म (छंद और छंदमुक्तता) का ही अंतर मानते हैं। शिल्प को वे रचना की विशिष्टता मानते हैं और इसी अर्थ में रचना कथ्य के अनुरूप अपना शिल्प गढ़ती है। यह रचना की वे अपनी विशिष्टता मानते हैं। आज के कठिनतर समय में कई तरह के बौद्धिक और मनोवैज्ञानिक दबावों के बीच सामाजिक संरचना, स्थितियों और उथल-पुथल को रचनाकार खुली आंखों से देख रहा है, रचना के स्तर पर उन्हें झेल रहा है और हस्तक्षेप भी कर रहा है। रचना सीधे-सीधे श्रोता को संवेदित करती है। साथ ही, ग़ज़लों में आई बाढ़ की चुनौती पर वे युवाकवियों की गीत-निष्ठा, गीत-विवेक और गीत-भाषा के प्रति आश्वस्ति व्यक्त करते हैं।

सम्मान्य मधुकर अष्ठाना जी ने नवगीत की जन्मभूमि भारत मानी है और उनका मानना है कि नवगीत के कथ्य से कई विधाएँ पोषित हुई हैं। नवगीत, गजल और आलोचना पर उनका कहना है कि दुष्यंत कुमार के बाद गजल की जो धारा वही वह वामपंथी प्रभाव से जुड़ी है और एक हथियार की तरह प्रयुक्त हुई है।

नवगीत भारतीयता के दायरे में प्रगतिशीलता का पक्षधर है। यह अराजकता से नहीं, संवेदनात्मक प्रतिरोध और सुधारवादी व्यवहारिकता से जुड़ा है। गजल और नवगीत में छंद की अनिवार्यता स्वीकार करते हुए वे आलोचना के संकट पर नवगीत के बाजार के विकास से आलोचना की परिवृद्धि को बोल देते हैं। गीत और नवगीत की पहचान पर वह गीत को व्यष्टिमुखी और नवगीत को समष्टि मुखी मानते हैं। नवगीत लयानुशासित बिम्बधर्मी काव्य है, जिसकी आधुनिकता को वे देश-काल सापेक्ष मानते हैं, भारतीय आत्मा का बिम्ब। अवनीश जी ने अष्ठाना जी से नवगीत के समवेत संकलनों, उनके साहित्यिक अवदान, उसके विकास और भारतीय संस्कृति के आयामों तथा नवगीत के संबंधों पर भी चर्चा की है। उनके विचार से नवगीत यथार्थ का कच्चा चिट्ठा प्रस्तुत कर परिवर्तन की दिशा में प्रतिरोध का वातावरण बनाने का संदेश देता है। 'विधा बड़ी या विधायक' के प्रश्न पर वे कहते हैं कि कुछ नवगीतकार अपने दम्भ, कूटनीति, गुटबाजी और शिविरबद्धता के व्यामोह में अपने को सबसे बड़ा समझते हैं। सर्जना के साथ चतुराई और जुगाड़ आज का कटु सत्य है।

तीसरा साक्षात्कार नवगीत से गहराई से जुड़े अग्रपांत हस्ताक्षर गुलाब सिंह जी से है। वे अपने साहित्यिक जीवन और कृतित्व से कभी मुगालते में नहीं रहे और न कभी निराश ही हुए। उन्होंने अपने रचनाकार बनने तक के संघर्षों, घर-गाँव, स्थितियों आदि से प्राप्त कवि मन की प्रेरणा, साहित्यिक परिवेश आदि पर सहजता से उत्तर दिया है। प्रतीक-बिम्ब आदि पर उनका मानना है कि नवगीत में बिम्ब एक झलक की तरह उभरते हैं। रचना में इनकी अतिशयता से बचना चाहिए। संवाद स्थापित करने की शक्ति आवश्यक है। नवगीत में फैलाव कम होने से विचार, चिंतन, भावना, कल्पना आदि एक अवलेह की तरह समेकित रस या अस्वाद्य प्रदान करते हैं। नवगीत और नई कविता की संवेदना में वह कोई विशेष अंतर नहीं मानते। मूल्यक्षरण और अमानवीयता के प्रति दोनों में आक्रोश है, किन्तु नवगीत कविता से अधिक सतर्क है। आक्रोश की निष्क्रियता का कारण वह अनैतिकता में डूबे समाज को मानते हैं। वे संवेदना और लय के बिना नवगीत को तो संभव ही नहीं मानते, नई कविता के प्रति भी दोनों को आवश्यक मानते हैं। गुलाब सिंह जी नवगीत के कथ्य, शिल्प, उद्देश्य, प्रवृत्तियों और उसकी ग्राह्यता पर भी वेवाकी से राय रखते हैं और साहित्य के प्रति पाठकीय उदासीनता का जिक्र करते हुए वे कविता का अर्थशास्त्र कवि के पक्ष में नहीं मानते, बल्कि कविता का अर्थशास्त्र मनुष्य को मानते हैं।

कुमार रवींद्र उन प्रमुख नवगीतकारो में है जो इंटरनेट के माध्यम से भी हिंदी साहित्य जगत में सक्रिय रहे। उन्होंने नवगीत, गजल, नाटक, दोहा, संस्मरण और यात्रावृत्त भी लिखे हैं। रवींद्र जी की सभी विधाओं में मनुष्य होने की तलाश विद्यमान है। वे गजलों, दोहा आदि को नवगीत का विस्तार मानते हैं। उनका मानना है कि गीत और नवगीत में पिता-पुत्र का रिश्ता है, पर वे क्लोन नहीं हैं। नवगीत एक प्रयोगधर्मी धारा है जो नदी की तरह पूर्वा पर अनुभवों-अनुभूतियों को समेटती उनसे आकार ग्रहण करती चलती है। रवींद्र जी नवगीत के मुखड़े को गीत की तरह निर्धारक तत्व नहीं मानते। वे उसे दिशा-निर्देशक मानते हैं। नवगीत गीत परंपरा का नवीनीकरण है, जिसमें व्यक्तिगत अनुभूति और समष्टिगत संवेदना अनुस्यूत रहते हैं। रवींद्र जी ने रचनाकारों की खेमेबाजी को विधा या क्षेत्र विशेष के प्रश्रय के रूप में ठीक माना है। वे शिविरबद्धता को ठीक मानते हैं, पर शिवराक्रांत होने को नहीं। वे आज की कविता के संदर्भ में कबीर की भूमिका को सामाजिक मानते हैं और सूर्य, तुलसी आदि को धार्मिक। फिल्मी-गीतों की लोकप्रियता को वे दृश्य-श्रव्य संसाधनों और सांस्कृतिक चेतना के विचलन का परिणाम मानते हैं और नवगीत की लोकप्रियता के लिए वे लोकगीत की निकटता पर बल देते हैं। वे मानते हैं कि फिल्मी गीत सिचुएशन पर आधारित होते हैं और साहित्यक गीत कवि की अनुभूतियों पर। वे नवगीत को गद्य कविता के विद्रूप स्वर से बचाए रखने की सलाह देते हैं।

काव्य-लेखन को साधना का प्रतिफल मानने वाले मधुसूदन साहा जी ने छांदस रचनाओं में गीत, नवगीत, दोहा, मुक्तक, हिंदी गजल और दोहा गजल आदि रूपों में अपने को अभिव्यक्त किया है। वे नवगीत को पूरी तरह आंदोलन या अभियान नहीं मानते, क्योंकि एक में उथल-पुथल है तो दूसरे में हमलावर प्रवृत्ति का संकेत है। वे मानते हैं कि नवगीत के प्रवर्तक बनने तथा वर्चस्व के लिए तर्क-वितर्क की खेमेबाजी में गीत में आई नवता को निखारने का प्रयास कम हुआ है। साहाजी बचपन से ही गीत के साधक रहे हैं (यद्यपि वे नवगीत के समर्थ रचनाकार

के रूप में भी स्थापित हैं)। शायद इसीलिये वे विशेषणों से संबद्ध गीत-विधाओं से अलग गीत को "हृदय तल से निकला एक भाव प्रवाह" मानते हैं। इसमें कथ्य और शिल्प के परिवर्तन के कारण ऊपरी कलेवर और नाम में चाहे जो बदलाव कर लिए जाएँ, गीत की मूल संवेदना समाजधर्मी ही कही जाएगी, जैसे रिश्ते माँ सिर्फ माँ होती है, ऐसे ही गीत सिर्फ गीत होता है।

साहा जी का मानना है कि यदि पूर्वाग्रही संपादक नवगीत के प्रति उपेक्षा भाव रखते हैं तो उससे नवगीत लेखन में कमी नहीं आएगी। आज इंटरनेट के जमाने में ऑनलाइन तथा मोबाइल पर पाठक से जुड़ना और प्रोत्साहन पाना, सभी संभव है। साहित्य संस्थानों में नवगीत की उपस्थिति वहाँ पर बैठे लोगों की रुचियों से जुड़ी है, पर एक न एक दिन रास्ता अवश्य निकलेगा। नवगीत की आलोचना के संदर्भ में वे नव-आलोचकों में अधीत संज्ञान की कमी और बड़े आलोचकों के पूर्वाग्रहों को उचित नहीं मानते।

इक्कीसवीं सदी के रचनाकारों के समसामयिक विषय और संप्रेषण की भावभंगिमाओं के विषय में वे संभावनाओं की अनंतता पर विश्वास व्यक्त करते हैं और कहते हैं कि सत् साहित्य सदा लोक के लिए लिखा जाता है। नवगीत भी इसी दिशा में अग्रसर है।

मयंक श्रीवास्तव जी की धर्मयुग में 1970 ई. में महंगाई पर छपी ग़ज़ल बहुत चर्चित रही। यह गजल उनके नवगीतकार का ही विस्तार है। वे गजल और नवगीत को जोड़कर नहीं देखते, दोनों के फॉर्मेट में अंतर मानते हैं। उनका मानना है कि पारंपरिक गीत से ही नवगीत का जन्म हुआ है। गीत अपने समय के अनुसार अपना स्वरूप स्वतः ग्रहण कर लेता है। भाषा, शब्द, संवेदना सभी में स्वाभाविक रूप से अंतर आ जाता है। उनके 'सूरज दीप धरे' संग्रह के गीत पारंपरिक हैं, किंतु वे वैयक्तिक होते हुए भी संपूर्ण समाज की सामूहिक अभिव्यक्ति भी हैं। समय के साथ सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक स्थितियाँ भी बदलती हैं। भोगे हुए दर्द की कुलभुलाहट, जीवन संघर्ष और समय सापेक्षता के साथ ही शिल्प, शैली, सोच और छंद को भी कथ्य के अनुकूल ढालती है और इसका प्रभाव सभी रचनाकारों की रचनाओं में व्यक्त होता है। वह मानते हैं कि प्रत्येक लेखक के अपने प्रतिमान होते हैं, जो समय और उम्र के साथ बदलते रहते हैं। लय गीत का प्राण है। इसके बिना गीत की कल्पना नहीं की जा सकती। गीतात्मकता, परिपक्व छंद-विधान और लय-प्रवाह का होना नवगीत के लिए आवश्यक है। वह कहते हैं कि अगर तथ्य पर ही ध्यान देना है तो छंदमुक्त कविता ही लिखिए, गीत या नवगीत को खराब करने की क्या आवश्यकता? मयंक जी बड़ी पत्रिकाओं में नवगीत को स्पेस न मिलने और छोटी पत्रिकाओं के दम तोड़ने पर टिप्पणी करते हुए विधाओं में आने वाले उतार-चढ़ाव और पत्रिकाओं की आर्थिक स्थिति को उत्तरदाई मानते हैं।

शांति सुमन, मूल नाम शांतिलता जी का मानना है कि रचनाएँ हमारे जीवित होने का सबूत हैं। वे नवगीत को अपने से अलग नहीं मानतीं। उनका मानना है कि रचनाकार व्यक्तिगत होकर भी सामाजिक होता है। वे यह भी मानती हैं कि नवगीत में स्त्री रचनाकारों को वैसा प्रोत्साहन नहीं मिला जैसा कहानी और नई कविता में। नवगीत में लय और छंद का अनुशासन सब साध नहीं पाते। यद्यपि नवगीत लेखन में शब्द के लिए बहुत सोचना नहीं पड़ता। कलम की नोक पर शब्द के साथ लय-छंद भी उतरते चले जाते हैं। गिनने की आवश्यकता नहीं पड़ती। नवगीतकार के पद और पैसा के प्रश्न पर उनका कहना है कि कविता या नवगीत लिखना कोई आजीविका नहीं है। पैसे से रचनाकार को आँकना गीत-कविता को कम आँकना है। यह जीवन संघर्ष और जन सरोकार का माध्यम है तथा स्वान्तः सुखाय है। पाठकों के लिए वह कहती हैं कि समझदार और गहरी रुचि वाले पाठक हमारी चेतना को उद्वेलित करते हैं। पाठक का ही संवर्द्धित रूप आलोचक या समीक्षक है। साहित्य मनोरंजन का विषय नहीं है। उसमें हम अपने दैनंदिन और शाश्वत मूल्यों का स्पंदन पाते हैं।

राम सेंगर जी नवगीत के अपनी धज के कवि हैं। नवगीत में विचारधारा के प्रश्न पर उनका कथ्य है कि किसी भी विधा में विचारधारा ही रचनाकार की निर्णायक कसौटी होती है। संवेदना और विचार दोनों के समाज-सापेक्ष संतुलन से काव्य की दिशाएँ खुलती हैं। विचार ही वह बात है जो कविता में खुलती-बोलती है। नवगीत में शिल्प ही सब कुछ नहीं है, विचाररूपी मूल्यदृष्टि प्रमुख है। संघर्ष चेतना पर सेंगर जी का स्पष्ट मत है कि पाठक में संघर्ष चेतना जगाने के लिए कवि में संघर्ष चेतना जागृत होना आवश्यक है, अन्यथा

पाठकों को वह क्या प्रक्षेपित करेगा। वह कहते हैं चेतना जब लुल्ल हो जाती है तब हमारा कवि डींग को संघर्ष चेतना मानकर खुद को गुमराह करता है। अतः गीत लेखन के प्रभृत विद्वानों की गीतधारा को आगे बढ़ना चाहिए।

कवि जीवन की गीतमयता पर उनका कथ्य है कि गीत अगर सध जाए तो दरअसल जीवन गीत ही है। गीत में निराहम, सहजता में लय, अनघता, तदाकारिता आदि यदि मानव व्यक्तित्व में आ जाएँ, तो वह सचमुच गीतमय ही लगे। प्रगतिशील लेखक संघ से जुड़ाव पर वे छोटी जगह का हवाला देते हुए उसे नवगीत का धुर-विरोधी संगठन कहते हैं और उससे संलग्न होकर भी वे असंलग्न हैं।

'अंतराल' के संपादक और प्रकाशक नचिकेता जी शुद्धरूप से नवगीतकार हैं। यह शुद्धता का विशेषण जनगीत के प्रति रुझान को निरापद करने हेतु प्रयुक्त हुआ है। उनका मानना है कि कविता अगर मनुष्य की मातृभाषा है तो गीत मानवीय संवेदनाओं का अर्थसम्पृक्त अंतःसंगीत है। अर्थात गीत एक आत्मपरक संरचना है। गीत कविता का आद्य-रूप है जो मानव सभ्यता के हर चरण में उपस्थित रहा है। आधुनिकता और अस्तित्ववादी जीवन दृष्टि के प्रभाव में लिखे गए गीत नवगीत हैं। गीत, जनगीत और नवगीत में वे 'जन' और 'नव' विशेषणों को एक विशेष कालखंड की प्रवृत्तियों को पहचानने के लिए प्रयुक्त किया मानते हैं। समाज को बदलने की क्रांतिकारी भूमिका निभाने में जनजीवन में घुले गीत ही समर्थ हैं। अतः लेखक को कलात्मक की रक्षा करते हुए सहजता, रागात्मकता और लोकप्रियता को अपनी कलादृष्टि में शामिल करना चाहिए। वह मानते हैं कि सच्चा साहित्यकार प्रतिपक्ष की नहीं, प्रतिरोध की भूमिका निभाता है। वे नवगीतकारों को अतिबौद्धिकता और दुरूहता से बचते हुए जनजीवन के कच्चे माल को सहज भाषा, ताजे बिम्ब और बोधगम्य रूप में तराश कर प्रस्तुत करने की सलाह देते हैं। वे नवगीतकारों को गोलबंद होकर नवगीत के खिलाफ रचे जा रहे षडयंत्रों के विरुद्ध खड़े होने और नवगीतों के मूल्यांकन के लिए अपने प्रतिमान और सौंदर्यशास्त्र निर्माण करने को भी कहते हैं।

प्रतिष्ठित कवि व आलोचक वीरेन्द्र आस्तिक जी नवगीत में चेतना और संवेदना का समन्वय मानते हैं, अर्थात हृदय और बुद्धि का पाणिग्रहण। वे जनबोध और समाजबोध को भी अलगाते नहीं है। उनका कहना है कि गीत और नवगीत के बीच में एक तो काल का अंतर है और दूसरा रूपाकार का, जहाँ नवगीत तक आते-आते कई वर्जनाएँ टूटी हैं तथा कथ्य और भाषा में बदलाव आया है। गीत में छंद प्रमुख था, पर नवगीत में यथार्थ की जटिलता के कारण लय महत्वपूर्ण हो गई है। गीत व्यक्ति केंद्रित है, तो नवगीत समय सापेक्ष। नवगीत गीत का आधुनिक संस्करण है, पिता-पुत्र की तरह। आस्तिक जी मानते हैं कि आज साहित्य समाज का दर्पण ही नहीं है, बल्कि वह मनुष्य और उसकी वैश्विक सभ्यता का दृष्ट भी है। नवगीत के सामने आज भ्रष्टाचार, शोषण आदि कितनी ही चुनौतियाँ हैं जिनका उसे उत्तर देते रहना है।

नवगीत की समीक्षा पर आस्तिक जी का मानना है कि नवगीत की प्रगतिशीलता हमेशा आलोचनात्मक चुनौतियों को स्वीकार करती रही है। प्रासंगिकता के क्षेत्र में नवगीत पहले से अधिक सचेत है तथा जनहित मैं उसके स्वर और व्यापक हुए हैं। नवगीत में समय-सापेक्षता, सांस्कृतिक अस्मिता और जीवनराग की विराटता की अभिव्यक्ति है। आस्तिक जी यह भी मानते हैं की गद्य कविता के प्रतिमान नवगीत के प्रतिमान नहीं हो सकते। आज नवगीत का कोई सर्वस्वीकृत आलोचक नहीं है, अतः उसके प्रतिमानों पर चर्चा की बहुत गुंजाइश है। आस्तिक जी लय-गेयता, मुखड़ा (टेक) और तुकांतता का नवगीत की मर्यादा बनाए रखने में विशेष महत्व स्वीकारते हैं। इस प्रसंग में उन्होंने लय की प्रमुखता, गेयता के पार्श्व में आने, तुकांतता के उच्चारण आधारित होने तथा उसके उत्तम, मध्यम और साधारण स्वरूप को भी व्याख्यायित किया है। नवगीत को मूल्यांकित करने वालों की कमी और षड्यंत्रों पर भी उन्होंने अपनी बात रखी है। वे गीत बिरादरी में एकजुटता की आवश्यकता, नवगीत की बारीकियों को आत्मसात करने, नवगीत के इतिहास आदि के अध्ययन और आलोचना के क्षेत्र में उतरने के लिए भी युवा नवगीतकारों को आवाहित करते हैं।

बहुआयामी व्यक्तित्व के धनी रामनारायण रमण जी का विचार है कि "नवगीत नवीन समस्याओं और समाधानों के साथ प्रगतिशील विचारों का समावेश उसे समृद्ध बनता है।" शिल्पविधान तो स्वतः ही नई

अनुभूतियों, बिम्बों और प्रतीकों के माध्यम से आकार ग्रहण करता है। वे लोकगीत को लोक का प्रतिनिधि और जनगीत को सर्वहारा से जोड़ते हैं। पाठकवर्ग की समस्या पर रमण जी का कथ्य है कि अन्य माध्यमों की अपेक्षा ज्ञान का श्रेष्ठ साधन पुस्तकें आज बड़ी तादाद में लिखी जा रही हैं, किन्तु साहित्यकारों के पास पाठक वर्ग नहीं है। आज पत्रिकाएँ भी सहयोगी आधार पर ही चल रही हैं, बल्कि उनसे जुड़े साहित्यकार ही उन्हें चला रहे हैं। वर्तमान में बहुत सारे नवगीतकार अच्छा लिख रहे हैं। नवगीत को जन-जन तक पहुंचाने के लिए उसे वर्तमान समस्याओं से टकराना होगा और समाधान खोजने होंगे। साहित्य अच्छे मनुष्य के निर्माण में सहायक है।

गीत के नए पन, मधुर स्वर और आकर्षक व्यक्तित्व के कारण लोकप्रिय डॉ बुद्धि नाथ मिश्र का मानना है कि गीत की हिफाजत के लिए गद्य का होना जरूरी है। बहुत से रचनाकार पद्य में ही कच्ची-पक्की रचनाओं को लिखकर निराशा अनुभव करते हैं। पैसे देकर किताबें छपवा रहे हैं। यह भाषा विकास के लिए उचित नहीं है। पाठकों के सामने भी संकट है कि किसे पढ़ें, किसे न पढ़ें।

कविता और गीत की विभाजक रेखा पर उनका मानना है कि कविता यदि हिमालय पर्वत श्रृंखला है तो गीत उसका कैलाश शिखर। कविता या पद्य में गीत, नवगीत, दोहा, सोरठा सभी छंद आ जाते हैं। जो छंदमुक्त हैं उन रचनाओं को वे कविता की श्रेणी में रखना उचित नहीं मानते और उसे बाँझ डाल कहते हैं जो दूसरी डालों की जीवन ऊर्जा सोख लेती है। वह मानते हैं कि बँधे-बँधाए साँचों के अतिरिक्त भी गीत में सैकड़ो छंद हैं। गीत का साँचा अपनी अलग पहचान लिए होता है और कवि अपना अलग भी साँचा बना सकता है। छंदमुक्त कविता के बयान को लाँघते हुए नवगीत ने जीवन की जटिलताओं को बाँधा है, छंदबद्ध किया है। इससे यथार्थपरक अभिव्यक्तियाँ ज्यादा सशक्त हुई हैं। नवगीत के प्रतीक और बिम्ब हजारों शब्दों को अपने चित्र में समेट लेते हैं। इससे नवगीत की प्रासंगिकता बढ़ जाती है। मिश्र जी मानते हैं कि राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक घटनाओं और संक्रांतियों का प्रभाव हिंदी काव्य-सृजन पर पड़ा है। वे यह भी मानते हैं कि रचना की गुणवत्ता के नियंत्रण के लिए वरिष्ठ कवियों का मार्गदर्शन और आत्मपरीक्षण की कसौटी पर कसना चाहिए, क्योंकि नई पीढ़ी के नवगीतकारों के सामने संभावनाएँ भी हैं और चुनौतियाँ भी।

अध्ययन, अध्यापन और शोध में सतत सक्रिय रामसनेहीलाल शर्मा 'यायावर' एक अच्छे नवगीतकार हैं। उन्होंने "समकालीन गीत काव्य : संवेदना और शिल्प" पर डी.लिट. की है। इस साक्षात्कार में आपने नवगीत की व्युत्पत्ति से लेकर नवगीत के तत्व, स्वरूप और अभिरचना की इकाइयों पर अपने सम्यक विचार रखे हैं। 'नवगीत कोश' के लिए विश्वविद्यालय अनुदान आयोग से आपको सहायता प्राप्त हुई है जिसे वे पाँच खण्डों में संकलित कर रहे हैं। नवगीत के शिल्पविधान के वे पाँच घटक मानते हैं— भाषा, छंद, अलंकार, प्रतीक और बिम्ब। उनका मानना है कि नवगीत में वक्रोक्ति और श्लेष को छोड़कर अन्य शब्दालंकारों से बचना चाहिए। वे अर्थालंकारों में भी कुछ को ही महत्व देते हैं। उनका मानना है कि मार्क्सवाद और अस्तित्ववाद की सैद्धांतिकता से निकलकर नवगीत आज भारतीय जीवन मूल्यों और चेतना की ओर मुड़ा है। इसलिए आज परिवारवाद, माता-पिता आदि पर गीत लिखे जा रहे हैं। यथार्थ के साथ ही मूल्यनिष्ठा, समाज और मानवीय हित का ध्यान रखा जा रहा है। नवगीत और नई कविता के भेद को स्पष्ट करते हुए उनका कथ्य है कि नई कविता जीवन के साथ कदम मिलाकर नहीं चल पा रही है, उसमें तथ्य प्रधान है। नवगीत समय के साथ गतिमान है और उसमें संवेदना तथा नित्य नूतनता है। नवगीत ने नई कविता की रुक्षता को तोड़ा है और पठनीयता को बढ़ाया है। यूट्यूब और व्हाट्सएप आदि में भी वह सक्रिय है, जो नवगीत के उज्जवल भविष्य का सूचक है।

हिंदी कविता के केंद्र में नवगीत शीर्षक से साक्षात्कार में डॉ ओमप्रकाश सिंह कहते हैं कि आदमी के अभावों, शोषण और सामाजिक सरोकारों से प्रभावित उनका लेखन संघर्षशील और प्रतिरोधक बना है। हिंदी की विकासयात्रा में यद्यपि उन्होंने गजल, दोहा, हाइकु भी लिखे हैं, पर केंद्र में नवगीत ही रहा है। उन्होंने 'नई सदी के नवगीत' पाँच खण्डों में सम्पादित किया है। फिर भी उसमें बहुत से रचनाकार छूट गए हैं। वे कहते हैं कि यह कार्य आगे के लोग करेंगे। नवगीत की आलोचना के क्षेत्र में वे दिनेश सिंह जी के कार्य पर गर्व करते हैं तथा बैसवारा के कई नवगीतकारों में काफी ऊर्जा देखते हैं।

गीत, नवगीत और समकालीन गीत पर ओमप्रकाश जी का कथ्य है कि मनुष्य के भीतर का अंतर्नाद जब लयबद्ध पीड़ा के साथ बहिर्मुखी अभिव्यक्ति बनता है तब संवेदना भावप्रधान और छंदबद्ध होती है और विचार सहायक होते हैं तथा शिल्प भी। समकालीन गीत परंपरिकता से मुक्त आधुनिकता के पटल पर युग परिवर्तन से युक्त मानवीय संवेदना को मूल्यबद्ध करते हैं। अर्थात युग संदर्भों और कालबोध से जुड़े हैं। समकालीनता अपने समय की समस्याओं और चुनौतियों से मुकाबला करती है जिसे वे गीत और नवगीत दोनों में अभिभूत मानते हैं। वे किसी को नवगीत का प्रवर्तक नहीं मानते, वरन सामूहिक योगदान मानते हैं। रचना प्रक्रिया में आए बदलावों पर भी उन्होंने प्रकाश डाला है और नवगीत की छंदबद्धता को महत्व दिया है। 'नयी सदी के नवगीत' और 'समकालीन नवगीत' में कालखंडगत अंतर है— एक दीर्घकाल खंड का निरूपक है, दूसरा लघु कालखंड का, जिसमें उस कालखंड की जीवनशैली और वैचारिकता क्रियाशील है। नवगीत की समकालीन सीमाओं के पार की संभावनाओं पर निश्चयात्मक मानक तैयार कर पाना वे संभव नहीं मानते। छांदस कविताओं की पत्र-पत्रिकाओं में उपेक्षा पर जहाँ मठाधीशों को कारण मानते हैं, वहीं नई कविता या छंदविहीन कविता न तो मंचों पर और न पाठकीयता के स्तर पर स्थान बना पा रही है, क्योंकि भारतीय मानस छंदबद्ध काव्य की लय से ही नहीं, बल्कि रागबोध से भी सदैव जुड़ा रहा है। ओमप्रकाश जी का मानना है कि हर पीढ़ी सृजन के स्तर पर संघर्षशील होती है और अपनी उपलब्धि को लेकर मूल्यांकन की प्रतीक्षा में शिथिल होने लगती है, किंतु समय उनका उचित मूल्यांकन करेगा, ऐसी आशा रखनी चाहिए।

नवगीत संवाद की इस पुस्तक में नवगीत की समझ प्रक्रिया और प्रवृत्ति को लेकर बहुत-सी वेद-खिड़कियाँ खुली है और उनके जाले साफ हुए हैं। गीत, नवगीत जनगीत और समकालीन गीत आदि के बीच की अंतर रेखा भी स्पष्ट हुई है। नवगीत के उद्भव, प्रवर्तन, शिविरबद्धता और उसके विकास के परिणामों पर भी प्रकाश पड़ा है। नवगीत के सम्पादनों, संयुक्त संकलनों और गीतकोशों आदि के रूप में अब तक हुए कार्यों तथा हो रहे कार्यों का भी उल्लेख देखने को मिलता है। नवगीत में आलोचकों की कमी और उस कमी को पूरा करने के लिए नवगीतकारों के आगे आने का भी अनुरोध है।

इस प्रकार यह पूरा संवाद नवगीत का इतिहास भी है, रचना-प्रक्रिया से जुड़ने का साधन भी है और भारतीय संस्कृति के परिप्रेक्ष्य में आदमी को आदमी बनाने या बनने के लिए प्रेरित करने का संदर्भ भी। मैं इस कृत-संकल्पित कार्य के लिए भाई अवनीश सिंह चौहान को बहुत-बहुत बधाई देता हूँ। ईश्वर उनको ऐसे ही महत्तर कार्य करने की अकूत शक्ति प्रदान करे।

[समीक्षित कृति : नवगीत : संवादों के सारांश, लेखक : अवनीश सिंह चौहान, प्रकाशक : प्रकाश बुक डिपो, बरेली (उ.प्र.), प्रकाशन वर्ष : 2023 (संस्करण प्रथम, पेपर बैक), पृष्ठ : 152, मूल्य : रु 350/-, ISBN: 978-93-91984-32-8]

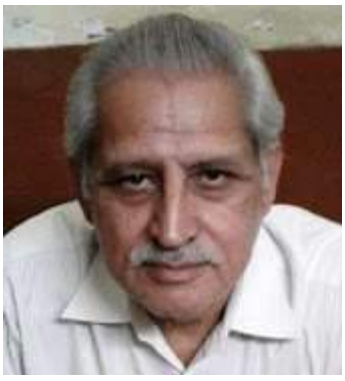

समीक्षक :
जाने-माने कवि, आलोचक व आचार्य डॉ. वीरेन्द्र निर्झर का जन्म 15 अक्टूबर 1949 को महोबा, उत्तर प्रदेश में हुआ। सेवासदन महाविद्यालय, बुरहानपुर (म.प्र.) में हिंदी विभागाध्यक्ष रह चुके डॉ. निर्झर की अब तक एक दर्जन से अधिक पुस्तकें— 'ओंठों पर लगे पहरे' व 'खिड़की पर सूरज बैठा है' (नवगीत संग्रह), 'विप्लव के पल' (काव्य संग्रह), 'ठमक रही चौपाल' (दोहा संग्रह), 'कजली समय' (पाठालोचन), 'वार्ता के वातायन' (आलेख), 'बुंदेली फाग काव्य : एक मूल्यांकन' (सं), 'आल्हाखण्ड : शोध और समीक्षा' (सं) प्रकाशित हो चुकी हैं। सम्प्रति : निदेशक, डॉ. जाकिर हुसैन ग्रुप ऑफ़ इंस्टीट्यूट्स, बुरहानपुर। संपर्क : एम.बी./120, न्यू इंदिरा कालोनी, बुरहानपुर-450331 (म.प्र.)

नवगीत

संवादों के सारांश

अवनीश सिंह चौहान

ISSN:2583-8849